विपश्यना

साधकों का
मासिक प्रेरणा पत्र

वार्षिक शुल्क रु. 30/-
आजीवन शुल्क रु. 500/-

बुद्धवर्ष 2558, भाद्रपद पूर्णिमा, 9 सितंबर, 2014 वर्ष 44 अंक 3

For Patrika in various languages, visit: http://www.vridhamma.org/Newsletter_Home.aspx

धम्मवाणी

वाचानुरक्खी मनसा सुसंवुतो, कायेन च नाकुसलं कयिरा।
एते तयो कम्मपथे विसोधये, आराधये मग्गमिसिप्पवेदितं॥

धम्मपद- २८१, मग्गवग्गो.

वाणी को संयत रखे, मन को संयत रखे और शरीर से कोई अकुशल (काम) न करे। इन तीनों कर्मपथों (कर्मेंद्रियों) का विशोधन करे। ऋषि (बुद्ध) के बताये (अष्टांगिक) मार्ग का अनुसरण करे।

परम पूज्य गुरुदेव की प्रथम पुण्यतिथि

२९ सितंबर पूज्य गुरुदेव की पुण्य-तिथि बन गयी। यह उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितनी कि ३० जनवरी की उनकी जन्मतिथि। जन्म होने पर एक सत्त्व समाज में आता है। धीरे-धीरे जीवन विकसित होता है और वह सत्त्व कर्म करता है। किसी-किसी के अच्छे-बुरे कर्म न केवल उसके स्वयं के सुख-दुःख के कारण होते हैं बल्कि समाज को भी प्रभावित करते हैं, दिशा प्रदान करते हैं। जिस किसी व्यक्ति द्वारा किये गये अच्छे कार्य बहुतों के लिए मंगलदायक सिद्ध हों वही संसार में पूज्य बनता है। उसके बताये हुए मार्ग पर चल कर न जाने कितनों का कल्याण होता है। गुरुजी ऐसे ही एक सत्त्व थे जिन्होंने इस जगत को सर्वोच्च विद्या का दान दिया जो मनुष्य को सारे दुःखों से मुक्ति दिलाती है। उनके बताये हुए धर्म-मार्ग पर चल कर न जाने कितनों का कल्याण हुआ है और आगे भी होता रहेगा।

पुण्यतिथि ऐसी होती है जो न केवल जीवनभर के कर्मों की याद दिलाती रहती है, बल्कि उन्हें सँजो कर रखने के साथ प्रेरणास्पद भी बनती है।

गुरुजी के साथ मेरा ७३-७४ वर्षों तक सीधा संपर्क रहा और आज उनका शरीर हमारे सामने न रहते हुए भी वह सान्निध्य उसी प्रकार बना हुआ है। अनेक साधकों के अनुभव भी दर्शाते हैं कि पूज्य गुरुजी की मंगल मैत्री और उनका सान्निध्य हमें पहले जैसा ही अनुभव होता है। यह बिल्कुल सही है और जब तक हम उनके सिखाये हुए धर्मपथ पर चलते रहेंगे, यह संपर्क इसी प्रकार सतत बना रहेगा।

मेरा मानस यह जानकर मोद और प्रसन्नता से भर उठता है कि लोग शुद्ध धर्म से लाभान्वित हो रहे हैं। यह उनके सत्प्रयत्नों का ही फल है और यह सतत बढ़ते ही रहना चाहिए। उन्होंने अपने गुरुदेव की आज्ञानुसार काम किया और अब हमें भी उसी तरह इसे आगे बढ़ाना है। ऐसा तभी होगा जब हम उनके बताये मार्ग का अनुसरण बिना कुछ जोड़-तोड़ किये करते रहेंगे। ऐसा हो तभी हम सही माने में पूज्य गुरुजी को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करेंगे और अपना जीवन कृतार्थ करेंगे।

गुरुदेव हमेशा यही कहा करते थे कि धर्म तुम्हारे आचरण में उतरना चाहिए। जीवन में उतरे तो ही धर्म है। उनके जीवन और मृत्यु से प्रेरणा लेकर, उनके बताये हुए रास्ते पर चल कर, हम भी ऐसे ही धर्मवान बनें, इसी में सब का मंगल-कल्याण समाया हुआ है।

साशिष,

इलायचीदेवी सत्यनारायण गोयन्का.

परम पूज्य गुरुदेव का सहायक

मैं रामप्रताप यादव, पूज्य गुरुदेव का व्यक्तिगत सहायक।

धम्मगिरि के फूल-पौधों को मैत्री देते हुए पू. गुरुजी एवं माताजी

आज मैं धम्मगिरि में रहता हूं। गुरुजी के निवास में बने अपने कार्यालय में वैसे ही बैठ कर काम कर रहा हूं, जैसे कि उनके रहते हुए किया करता था।

आज मैत्री दिवस है। इस सर्वप्रथम निर्मित विपश्यना केंद्र को देख रहा हूं। कितना भव्य नजारा है। इतने सारे धम्महॉल, इतनी सुंदर हरियाली, फूल-पौधों से भरा गुरुजी-निवास का बगीचा, इसके पीछे अपनी चमक बिखेरता भव्य पगोडा, इतने सारे अत्याधुनिक सुविधापूर्ण साधक-निवास, आचार्य-निवास और इस शिविर में सम्मिलित हुए इतने सारे साधकों के खिले हुए चेहरे देख कर मन प्रसन्नता और आह्लाद से भर उठा है। यहां के भोजनालय में नित्य नियमित लगभग हजार या कभी इससे भी अधिक लोगों के लिए रुचिकर और स्वास्थ्यवर्धक भोजन ठीक समय पर बन जाता है। इस समय वर्षा ऋतु में यहां हरे-भरे पहाड़ से गिरते झरने यहां की भव्यता के अद्‌भुत नज़ारे हैं। इन सब को देखते हुए मन में गुरुजी के प्रारंभिक दिनों की यादें ताज़ा हो गयीं। उनके अनूठे सफ़र का

नज़ारा चलचित्र की भांति आखों के सामने से गुज़र रहा है। गुरुजी ने कैसी अतुलनीय श्रद्धा, विश्वास और पुरुषार्थ के साथ अनेक कठिनाइयों को पार करते हुए यह सफ़र तय किया था।

पिछले भवों की मेरी पुण्यपारमी के कारण ही गुरुदेव के भारत आते ही उनकी सेवा में रहने का मुझे पुण्यावसर प्राप्त हुआ। उभर आयी हैं आज उन प्रारंभिक शिविरों की अविस्मरणीय यादें।

जून १९६९ में गुरुदेव भारत आये। मुंबई पहुँचते ही अगले दिन अपने छोटे भाई श्री श्यामसुंदर के साथ कालबादेवी रोड पर पांचवी मंजिल पर स्थित उनके कार्यालय पहुँचे। हिंदी में पत्राचार के लिए मुझे बुलवाया गया। वे लगभग २०० लोगों के नाम-पते की सूची साथ लेकर आये थे। उन सबको इस बात की सूचना दी गयी कि सयाजी ऊ बा खिन ने उन्हें विपश्यना सिखाने की स्वीकृति दी है और शीघ्र ही मुंबई में विपश्यना का एक दस दिवसीय शिविर लगेगा। जो भी इसमें सम्मिलित होना चाहें अथवा जो अपने क्षेत्र में शिविर लगवाने की व्यवस्था करना चाहें, वे शीघ्र संपर्क करें। पत्राचार आरंभ हो गया। मुंबई के अतिरिक्त मद्रास, सारनाथ, कलकत्ता, दिल्ली, ताडेपल्लीगुडम (आंध्र प्रदेश) माधोगंज (उ.प्र.), अजमेर (राजस्थान) आदि कई स्थानों से शिविर की मांग उठने लगी। ३ से १३ जुलाई तक मुंबई की पंचायत-वाड़ी धर्मशाला में पहला शिविर लगा। हॉल बड़ा (लंबा) था और सम्मिलित होने वाले साधक मात्र १४ (चौदह), फिर भी गुरुजी के निवास के लिए उसमें कोई उचित कमरा नहीं था। हॉल के पास वाले कमरे के ऊपर महिलाओं का निवास था। ऊपर रहें तो गुरुदेव को सीढ़ियों से ऊपर-नीचे आना-जाना पड़े। अतः उन्होंने उसी लंबे हाल में कपड़े का पार्टीशन डलवाया और उसके पीछे अपना निवास बनाया। पर्दे के उस पार धम्मसीट लगवाई और जिस दरवाजे से साधक प्रवेश करते, उसी से गुरुदेव भी बाथरूम आदि के लिए बाहर आते-जाते।

इस तीन मंजिला चौकोर इमारत के तल मंजिल पर एक ओर धर्मशाला का कार्यालय और मुख्य द्वार, दूसरी ओर रसोईघर और उसके बगल में बरामदे जैसा भोजनालय, चौथी ओर हॉल तथा बीच में खुला आंगन। पहली मंजिल पर तीन ओर पुरुष निवास तथा सड़क की ओर, मुख्य द्वार के ऊपर धम्महॉल। इस हॉल के ऊपर कोई मंजिल नहीं बल्कि टाइल-वाली छत थी, इसीलिए गुरुदेव ने इसमें पार्टीशन करवा कर अपना निवास सुनिश्चित किया। दूसरी मंजिल के तीनों ओर बने कमरों में महिला निवास था। तीनों मंजिलों के एक कोने में केवल दो-दो शौच-घर, एक या दो स्नान-घर और एक मोरी। बारी-बारी से लोग कतार-बद्ध होकर उन्हीं का उपयोग करते। जब गुरुजी को शौचादि के लिए जाना होता तब वे पूछते कि देखो कोई खाली है क्या? खाली रखने की सूचना लगाने पर भी कि ''गुरुजी आ रहे हैं, कोई अंदर नहीं जायँ'', फिर भी जब तक उन्हें बताने जाता, कोई-न-कोई अंदर चला ही जाता। अब या तो गुरुजी खड़े होकर इंतजार करते अथवा वापस अपने कमरे में जाकर बैठ जाते और दुबारा खाली होने की प्रतीक्षा करते। पहली मंजिल पर दूसरी ओर सीढ़ियों के पास वाले कमरे में मेरा निवास और कार्यालय था ताकि मैं ध्यान रखू कि कोई भूल से ऊपर न आ जाय। शिविर सुचारु रूप से चल रहा था।

परंतु अचानक शिविर के पांचवें दिन मैं बीमार पड़ गया और साथ ही कई साधक-साधिकाएं भी। गुरुजी को चिंता हुई कि क्या बात है? शंका हुई कि कहीं कोई भोजन-संबंधी बाधा तो नहीं है? डॉक्टर बुलवाया गया और उसने सब को देख कर दवा दी। मुझे भी बुखार की दवा दी और अगले दिन कुछ ठीक हुआ। तब गुरुजी मेरे कार्यालय में आकर पूछने लगे कि कहीं मैं किसी प्रकार की साधना तो नहीं करता। मैंने कहा, एक साधना (आनंदमार्ग) मैं रोज सुबह-शाम आध-आध घंटे नियमित रूप से करता हूं। उनके मुँह से निकला ''ओह! इसीलिए तुम भी बीमार हुए और मेरे साधक-साधिकाएं भी। यह बीजमंत्र की साधना है, जबकि मैं यहां नैसर्गिक क्रियाओं को देखने की साधना सिखा रहा हूं। एक ही कंपाउंड में रहने से इन दोनों का मेल नहीं बैठ सकता। तुम्हें इसे बंद करना होगा अन्यथा यहां रह नहीं सकते।'' मैंने कहा, 'मैं अपने घर जाकर किया करूंगा, परंतु छोड़ नहीं सकता। हमेशा की तरह कार्यालय के समय यहां आ जाया करूंगा।' तब उन्होंने मुझे प्यार और मैत्री के साथ दोनों साधनाओं के अंतर को समझाना आरंभ किया और कहा कि यदि उस साधना को छोड़ कर इसे करने लगोगे तो मैं जिम्मेदारी लेता हूं कि तुम्हारी कोई हानि नहीं होने पायगी। आगे और भी कई शिविर लगने हैं। अच्छा होगा कि तुम इसके प्रारंभिक कदम यहीं सीख लो।

बड़ी उधेड़-बुन के बाद मेरे स्वीकृति देने पर वे मुझे हॉल में ले गये और विधिवत आनापान की शिक्षा दी। शिविर का आधे से अधिक समय बीत चुका था अतः इससे अधिक और कुछ हो नहीं सकता था। मुझे निर्देश दिया कि बस सांस देखने का काम करते रहूं। मैंने वही किया और शिविर शांतिपूर्वक संपन्न हुआ। सारे उपद्रव शांत हो गये।

इस शिविर में मैंने कोई प्रवचन नहीं सुना था और न ही आगे की कोई जानकारी चाही थी। पुरानी साधना छोड़ कर आनापान करने लगा। अगला शिविर २४ अगस्त से ३ सितंबर तक मद्रास (चेन्नई) में लगने वाला था। उससे लगभग १५ दिन पूर्व उनके साथ मैं भी मद्रास गया। वहां उनके सबसे बड़े भाई श्री बालकृष्णजी के घर पर रह कर साधना करते हुए अचानक एक दिन मेरी नाक के नीचे चींटी-सी रेंगने लगी। मैंने हाथ लगा कर हटाना चाहा परंतु आंख बंद करते ही पुनः रेंगने लगती। मैं असमंजस में पड़ गया कि यह क्या मुसीबत है। कार्यालय में बैठे गुरुजी से डिक्टेशन लेने के बाद मैंने इस बारे में पूछा तो उन्होंने कहा कि इसे महत्त्व मत दो। केवल सांस देखते रहो। जब दस दिन के शिविर में बैठोगे तब इसके बारे में बताऊंगा।

अब २४ अगस्त के शिविर में मैं भी सम्मिलित हुआ। आवश्यक पत्राचार तब भी जारी रहा। अवकाश के समय जाकर डिक्टेशन लेता, देर रात तक टाइप करता और साधना के समय साधना करता। दीर्घकाल तक आनापान करते रहने का फायदा हुआ। विपश्यना मिलते ही सारे शरीर में संवेदना की अनुभूति होने लगी, परंतु पुरानी साधना के कारण व्यवधान भी खूब आये। गुरुदेव ने रंगून स्थित अपने बड़े भाई श्री बाबूलालजी को इन सब घटनाओं के बारे में विस्तार से पत्र लिखा और गुरुदेव सयाजी ऊ बा खिन को बताने के लिए कहा। उनकी ओर से मंगल मैत्री आयी और सारे तूफान शांत हुए। सोचता हूं कितना भाग्यशाली हूं मैं।

उन दिनों धर्मशालाओं में लगने वाले सभी शिविर अनेक प्रकार की कठिनाइयों से भरे होते थे। सब जगह गुरुदेव को कष्टों का सामना करना पड़ता था परंतु उनके चेहरे पर कभी कोई शिकन नहीं आयी। वे कहते ऐसा तो समझ कर ही आये हैं, अतः इसमें बुरा मानने की कोई बात नहीं है। सभी साधक भी तो वैसे ही कष्टों में से गुजरते हैं।

ऐसा ही एक शिविर गुजरात के अहमदाबाद के पास सादरा नामक गांव में लगवाया गया। वहां साधकों ने ही स्वयं मिल-जुल कर लकड़ी-उपलों से जलने वाले चूल्हे पर भोजन आदि बनाने से लेकर शिविर का सारा कार्यभार संभाला। साधना की चेकिंग हो जाती तब कुछ साधक-साधिकाएं मिल कर रसोई का काम करने लगते। भोजनोपरांत महिलाएं साफ-सफाई भी करतीं। गुरुजी ने मुझे पहले ही बता दिया था कि गरीबों का शिविर है, कहीं किसी चीज की मांग नहीं कर लेना। जो मिले, वही ले आना। अपनी ओर से कभी कुछ मत कहना। वहां पहले दिन गुरुजी की दोपहर की थाली लगाने गया तो एक सब्जी, दाल, रूखी-सूखी अधजली चपातियां, सलाद के रूप में एकाध प्याज के टुकड़े और छाछ लेकर

आया। गुरुजी ने खाने से पहले फिर पूछा कि कुछ मांग तो नहीं की? मैंने कहा, 'नहीं, उन लोगों ने पूछा तो बहुत कुछ, परंतु मैंने बताया कुछ नहीं।' भोजनोपरांत वे लोग गुरुजी से कहने गये, 'गुरुजी हमारा भोजन आपके अनुकूल नहीं है, परंतु इससे अधिक हम यहां कुछ कर भी नहीं सकते। कृपया क्षमा करें। यह स्थान शहर से बहुत दूर है।' गुरुजी ने हँसते हुए कहा, 'भोजन बड़ा स्वादिष्ट था, क्योंकि तुम्हारी मैत्री जो साथ थी। तुम लोग अपनी साधना करते रहो, मुझे यहां कोई कष्ट नहीं है।' उस शिविर में भाग लेने वालों में से कुछ लोग आज विपश्यनाचार्य हैं और धम्मासन पर बैठ कर कितनों के कल्याण में सहायक हुए हैं।

उन्हीं दिनों अजमेर के पास पुष्कर में एक शिविर लगा। व्यवस्थापक ने तो बहुत लच्छेदार भाषा में पत्राचार करके लोगों को आमंत्रित किया। गुरुदेव ने भी उसके पत्राचार की भाषा और लिखावट देख कर शिविर की स्वीकृति दे दी थी। शिविर वह अजमेर में ही लगवाना चाहता था परंतु वहां कोई स्थान उपलब्ध नहीं हो सका। धर्मशालाएं तो वहां भी हैं लेकिन लोगों ने बहाने बना दिये कि यह बौद्धों का शिविर है। थक-हार कर उसने पड़ोस के तीर्थ-स्थान पुष्कर में एक धर्मशाला ठीक की। क्योंकि उस समय पर्व का मौसम नहीं था, अतः वह खाली पड़ी थी। परंतु ऐन मौके पर अजमेर या आस-पास का कोई भी व्यक्ति उस शिविर में नहीं बैठा।

गुरुदेव उन दिनों ३-टियर स्लीपर यानी आज के स्लीपर क्लास में ही यात्रा करते थे। तब मैं और गुरुदेव एक साथ ही ट्रेन में जाते। ट्रेन में सामने की सीट पर एक साधु (संन्यासी) बैठा था, जिसका कोई निश्चित गंतव्य नहीं था। कहीं भी उतर सकता था। ध्यान-चर्चा चली तो उसने भी शिविर में बैठने की इच्छा प्रकट की। गुरुदेव ने कहा, मेरे साथ पुष्कर चले चलो। वहां कल ही शिविर लगेगा। हम तीनों स्टेशन पर उतरे और वहां से व्यवस्थापक के साथ सीधे पुष्कर पहुँचे। देखा वहां किसी प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं थी। उस 'यादव धर्मशाला' में एक भी बाथरूम या शौचालय नहीं। शिविर व्यवस्थापक ने भवन के बाहर बगल के सूखे नाले की पक्की मेड़ पर घास-फूस की चटाई लगा कर ३-४ फुट का केबिन जैसा घेरा बनवा दिया था। नाले की मेड़ पर बैठ कर शौचक्रिया करो जो सीधे नीचे खुले रेतीले नाले में ५-७ फुट नीचे गिरे और वहां नीचे पालतू जानवर आते-जाते रहें। नहाने के लिए कहा गया कि धर्मशाला के आंगन के एक कोने में चटाई लगवाई गयी है। ऊपरी मंजिल पर कोई है नहीं। चौकीदार कूएं से पानी लाकर दे देगा। यहीं स्नान कर लें। एक मात्र चौकीदार था जिसने साधकों का भोजन बनाने की जिम्मेदारी भी ले रखी थी। वही साफ-सफाई भी करता। गुरुदेव ने कहा, यहां नहाने से अच्छा है चलो बाहर कूंएं की पक्की जगत पर ही नहा लेंगे। वहां केवल पानी ही निकालना होगा, यहां तक लाने का काम तो बचेगा। उन्होंने एकाध दिन बाद उस नव-निर्मित शौचालय का भी उपयोग बंद कर दिया। एक लोटा पानी लेकर गांव वालों की तरह वे भी बाहर खुले में ही शौच जाने लगे।

रास्ते में मिला वह संन्यासी और अकेला व्यवस्थापक दो ही व्यक्ति शिविर में बैठने वाले। गुरुदेव ने कहा कोई बात नहीं। यादव, चलो हम दोनों भी शिविर में बैठ जाते हैं। इस प्रकार हम चारों शिविर में बैठ गये। वहां गांव में न कोई पत्र जल्दी पहुँच सकता था और न फोन आदि की कोई सुविधा थी। अतः हम शांतिपूर्वक साधना कर सके। गुरुजी साधना भी करते रहे और वहां प्रवचन भी वैसे ही दिया, जैसे अन्य शिविरों में देते हैं। व्यवस्थापक ने इसके पहले विपश्यना का कोई शिविर नहीं किया था, फिर भी वह केवल सात दिन ही शिविर में रह सका। उसने कहा श्रीलंका में उसे किसी आवश्यक मीटिंग में जाना है। अतः सातवें दिन वह भी चला गया। अब रह गये हम तीन जो व्यवस्था से लेकर सब कुछ के सर्वेसर्वा थे। हां, चौकीदार समय पर खाना बना कर अवश्य दे देता, जैसा कि वह अपने लिए बनाया करता था। शिविर पूरा हुआ और अच्छा हुआ। संन्यासी तो धन्य हो गया। शिविर के अंत में कृतज्ञताविभोर होकर कहने लगा कि हिमालय में रहते हुए पिछले १२ वर्षों का मेरा संन्यासी का जीवन व्यर्थ ही गया। आज मैं सही माने में संन्यासी कहलाने लायक हुआ हूं।

पूज्य माताजी बरमा से एक वर्ष बाद आयीं। आने पर थोड़े समय तक परिवार और बच्चों के साथ रहीं और फिर वे भी धर्मकार्य में सहयोग देने लगीं। उन्होंने परिवार तथा बच्चों की मोह-माया छोड़ कर विपश्यना के ही प्रचार-प्रसार में अपना सारा समय लगा दिया। बच्चे धीरे-धीरे पढ़ते-बढ़ते रहे और काम-धंधे में लगते रहे। गुरुदेव जब शिविर लगा कर लौटते तब उन्हें यथासंभव व्यापार-धंधे के गुर सिखाते और अपने व्यापारी-जीवन से लेकर धर्मसेवा तक के अनुभव बताते और यह भी समझाते कि धर्मसेवा का लाभ और महत्त्व क्या है।

यही सिलसिला अंत तक चला। वही अतुल्य श्रद्धा, वही असीम पुरुषार्थ, वही अप्रतिम निष्ठा अपने गुरुदेव सयाजी ऊ बा खिन के प्रति और उनके द्वारा प्रशिक्षित सद्धर्म के प्रति। अपने गुरुदेव को दिये वचन को उन्होंने अपने प्राणांत तक निभाया।

सोचा उनके जीवन के प्रसंगों की कुछ यादें आप सब के साथ बांटूं। पर कितना कहूं, कितना भी लिखूं, कम ही है। ये अमूल्य यादें ही अब जीवन भर के साथी हैं और धर्मपथ पर चलने के लिए प्रेरणास्रोत हैं।

धन्य धन्य गुरुदेवजी! ....

सविनय,

रामप्रताप यादव

अंत तक सतत कर्मशील गुरुदेव

श्री यादवजी ने जैसे परम पूज्य गुरुदेव के भारत में विपश्यना के प्रारंभिक दिनों की यादें बाटीं, उसी प्रकार मैं उस महापुरुष के अंतिम दिनों की यादें बांटना चाहता हूं।

मैं वर्ष १९९० से २०१३ तक पूज्य गुरुजी के धर्मसाहित्य सृजन, विशेषकर उनके बरमा में लिखे गये पुराने लेख, कविताएं, धर्मपत्र आदि के संकलन, संशोधन और लेखन में धर्म-सहायक रहा हूं। हिंदी भाषा का शीघ्र-लिपिक होने के कारण पूज्य गुरुजी के निकट बैठ कर उनके नये लेखों के श्रुतिलेख (डिक्टेशन) लेते रहा हूं।

वर्ष २०११ में श्री यादवजी के अस्वस्थ होने के कारण पू. गुरुजी ने अपना शेष सृजन कार्य का निष्पादन करने के लिए मुझे अपने निवास पर मुंबई बुलाया और धर्म-सेवा करने का आदेश दिया। वहां अपने निवास के समीप ही धर्मपत्नी आनन्दी देवी के साथ रहने के लिए एक छोटा फ्लैट भी अंधेरी में दिलवा दिया, ताकि मैं प्रतिदिन १० बजे से ४-५ बजे तक उनके निवास पर आकर उनके निर्देशानुसार धर्म संबंधी लेखन-कार्य का संकलन कर सकूं। इस दौरान 'coffee table book', 'Vipassana Centres book', 'मेरी कविताएं' जैसी महत्त्वपूर्ण पुस्तकों का प्रकाशन हुआ। 'मंगल हुआ प्रभात' पुस्तक में लगभग १००० नये दोहे जोड़े गये। इनका संकलन संपादन किया गया और अनेक नये दोहे जो उनकी डायरियों में से टाइप किये, उन्हें उन्होंने ध्यान से देखा और उनमें से कुछ दोहों को हटाने का निर्देश दिया। इन प्रकाशनों में गुरुदेव का अमूल्य और उपयोगी मार्गदर्शन मिला।

उनकी शारीरिक अस्वस्थता के कारण उनका बहुत-सा समय दैनिक उपचार-विधि में निकल जाता था। इन सब के उपरांत जितना भी समय उन्हें मिलता, वे एक भी क्षण निरर्थक नहीं जाने देते थे। तुरंत ही धर्मकार्य में प्रवृत्त हो जाते थे।

अक्सर देखा जाता है कि ऐसी विषम शारीरिक अक्षमताओं के कारण और बढ़ती हुई उम्र के कारण भी मन पर असर होता है। व्यक्ति निराश और हताश होकर किसी कार्य में प्रवृत्त नहीं होना चाहता। परंतु गुरुजी कोई साधारण मनुष्य नहीं थे। वे विपश्यना के

सक्षम साधक ही नहीं, महान विपश्यनाचार्य थे। उनकी धर्मचेता का क्या कहना! एक साधारण मनुष्य की सीमाएं उन्होंने निश्चित ही लांघ दी थी। मैं बड़ी दृढ़ता के साथ कह सकता हूं कि पूज्य गुरुजी के मानसिक स्वास्थ्य और निर्णयात्मक बुद्धि में कभी कोई अवरोध या विच्छेद नहीं हुआ। गिरते स्वास्थ्य के कारण कभी थोड़ी देर के लिए कमजोरी भले आयी हो, परंतु उनकी प्रांजल बुद्धि कभी मंद नहीं हुई।

मैं अपने आप को अत्यंत सौभाग्यशाली मानता हूं कि मुझे उनकी

प्रारंभ से अंत तक सतत कार्यरत - श्री रामेश्वरजी को निर्देश देते हुए

सेवा का अवसर प्राप्त हुआ। उनके अंतिम दिन मेरे लिए असीम प्रेरणा के स्रोत बने। मुझे एहसास हुआ है धर्म की, विपश्यना की उस ताकत का जो इस भौतिक जगत की मानक सीमाओं से कहीं परे है।

मैं मानता हूं कि हम सब जिन्होंने उनसे विपश्यना विधि का ज्ञान अर्जित किया, धर्म ने जिन्हें द्वितीय शासन स्थापित करने के लिए चुना, उस महान विभूति के हम लोग शिष्य बने।

विश्व के लगभग सभी प्रमुख देशों में विपश्यना साधना सीखने के केंद्र स्थापित हैं। इन सभी केंद्रों की स्थापना विपश्यना के प्रमुख आचार्य पूज्य गुरुजी श्री सत्यनारायण गोयन्का के निर्देशानुसार हुई है। सभी देशों के केंद्रों के लिए पू. गुरुजी द्वारा एक समान, एक जैसे नियम-निर्देश, अनुशासन, समय-सारिणी बनाई हुई है और उसी के अनुरूप सभी विपश्यना-शिविरों का संचालन होता है।

विपश्यना साधना दीर्घकाल तक शुद्ध और अक्षुण्ण रहे, मानवता का कल्याण करती रहे; लोक-मंगल होता रहे- इस लक्ष्य को सामने रख कर ही पूज्य गुरुजी ने सभी देशों के केंद्रों के लिए समान रूप से एक जैसे नियम-उपनियम बनाये। सभी केंद्रों की सुव्यवस्था के लिए प्रबंधकों और विपश्यना साधना सिखाने वालों का चयन करने के लिए एक जैसी सुव्यवस्था स्थापित की।

आशा है पूज्य गुरुजी के प्रभूत मार्गदर्शन के आधार पर यह सर्वकल्याणकारी विपश्यना साधना अपने शुद्ध स्वरूप में सदियों तक कायम रहेगी और अनेकों का कल्याण करती रहेगी।

पूज्य गुरुजी कहा करते थे कि हमें देखना है कि किस तरह यह अनमोल विद्या आगामी २५०० वर्षों तक सुरक्षित रहे। इस परंपरा की बहुत बड़ी जिम्मेदारी आचार्यों के कंधों पर है। पूज्य गुरुजी अपना कार्य बड़ी निष्ठा और निपुणता से निभा गये। हम सब को भी चाहिए कि हम इसे अच्छी तरह निभाएं और यह अनमोल धरोहर अगली पीढ़ी के हाथों में सुरक्षित सौंपें। यही हमारी पूज्य गुरुदेव के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

विनम्र, रामेश्वरलाल शर्मा,
पू. गुरुजी का धर्म-सहायक

धम्मदीप विपश्यना केंद्र पर सहायक आचार्य सम्मेलन

(यू.के. विपश्यना संघ, ३०-४-२०१४)

यू.के. विपश्यना ट्रस्ट द्वारा आयोजित इस सहायक आचार्य सम्मेलन में सम्मिलित होने वाले श्री गोयन्काजी के सभी सहायकों और इस सप्ताह में सेवा देने के इच्छुक धर्मसेवकों का हार्दिक स्वागत है। विश्वास है आप सब की यात्रा सुखद रही होगी और यह सम्मेलन सभी के लिए उद्दीपक, स्फूर्तिदायक और प्रेरणाजनक रहेगा।

कल से ठीक सात महीना पहले हमारे परम प्रिय धर्मपिता और धर्मपथ प्रदर्शक श्री गोयन्काजी ने अपना शरीर त्याग दिया। उसके बाद से यह हमारी पहली धर्मसभा आयोजित हुई है। उन्होंने हमें जो धर्मशक्ति दी उसी का फल है कि आज धर्म का चक्र सारे विश्व में चारों ओर तेजी से घूम रहा है। यहां धम्मदीप में साधकों की बढ़ती हुई संख्या और धर्म के प्रति लोगों की आस्था का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि धम्मदीप के शिविर की बुकिंग खुलते ही शिविर कुछ ही घंटों में भर जाता है। यहां के पंजीयकों का कथन है कि जब कोई अपने काम से लौटने पर कंप्युटर खोलता है तो देखता है शिविर पूरी तरह भर चुका है और अनेक पंजीकरण के इच्छुकों के नाम प्रतीक्षा-सूची में आ गये हैं।

हमने देखा कि जो साधक श्री गोयन्काजी के निधन से अब अवगत हुए वे हमारे पास जानकारी लेने आते हैं कि क्या हमारी उनसे मुलाकात हुई थी? हमारे हां, कहने पर पूछते हैं कि क्या वे वैसे ही थे जैसा विडियो में दिखते हैं? हां भाई, बिल्कुल वैसे ही थे।

नई पीढ़ी के लोग जो अब उनके जीवनकाल के बाद अपना पहला शिविर करने आ रहे हैं अथवा वे जो अभी तक अजन्मे हैं, उन सब तक यह अनमोल विद्या हमें इसी शुद्ध रूप में पहुँचानी है। यही हमारा पावन ध्येय है और इस धर्मसभा का यही पावन संदेश है। आज श्री गोयन्काजी एक इतिहास बन गये हैं परंतु उन्होंने तो सचमुच इतिहास रचा है। आज के समाचार-पत्र राजनेताओं की गतिविधियों, लड़ाई-झगड़ों, दुर्घटनाओं आदि जैसे निराशाजनक समाचारों से ही भरे रहते हैं। ऐसे में मानव को सच्चे धर्मसुख की राह दिखाने वाला महामानव भी खबरों में खो गया। ऐसा धर्म जो अपने उद्‌गम स्थान से पूर्णतया लुप्त हो गया था, उसे उन्होंने न केवल वहां पुनर्स्थापित किया बल्कि पूरे विश्व में फैलाया। यह उनकी बृहत कार्य-सिद्धि, अद्‌भुत कौशल्य और समर्पणभाव से किया हुआ कार्य सचमुच भगवान के दूसरे शासन के प्रारंभ की प्रमुख भूमिका को दर्शाता है। हमें इसे निष्ठापूर्वक आगे बढ़ाना है और इस जिम्मेदारी को दृढ़तापूर्वक निभाना है।

उनके जीवनकाल में वे सदैव हमें सचेत करते रहे कि धर्म का जीवन जीना ही धर्म को आगे बढ़ाना है। अब यह जिम्मेदारी पहले से कई गुना अधिक बढ़ गयी है। यह गति, यह शुद्धता और इस विद्या की फलोत्पादकता को कायम रखना ही होगा। बिना गोयन्काजी के इस चुनौतीपूर्ण कार्य से हम डर सकते हैं परंतु हम अकेले कहां हैं? हम सभी धम्मसाथी उनकी छत्रछाया में पहले से अधिक सुरक्षित हैं। जो गहन विचक्षण ज्ञान और अनुशासन हमें उनसे प्राप्त हुआ है वह सदैव हमारी रक्षा करता रहेगा। जब भी हम धम्म-आसन पर बैठते हैं, हमें यही महसूस होता है कि यह शिविर हम नहीं, स्वयं गोयन्काजी संचालित कर रहे हैं। आज जबकि उनकी भौतिक उपस्थिति नहीं है तब भी हमें यही प्रतीत होता है। अर्थात हम उनके औजार की भांति काम कर रहें हैं और धर्म के सेवक मात्र हैं न कि अपने 'मैं' के पोषक। जिस प्रकार श्री गोयन्काजी अपने पूर्ववर्ती सभी गुरुओं के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की है, उसी प्रकार उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने का यही एक मात्र उपाय है कि हम उनके बताये हुए रास्ते पर स्वयं चलें और अन्य सभी को उस पर चलने के लिए प्रेरित करते रहें।

अपने एक प्रवचन में उन्होंने एक छोटे से पिल्ले की कहानी सुनायी थी-- एक पिल्ला एक बैलगाड़ी के नीचे चल रहा था। चलते-चलते उसके मन में ऐसा भाव उठा कि उस पूरी गाड़ी का बोझ वह खुद उठा कर चल रहा है, जबकि वह तो उसकी छांव में चल रहा था। ऐसे ही हम भी अपनी जिम्मेदारियों को महसूस करते हुए उनकी छांव में चलेंगे तो हम पर कोई बोझ नहीं होगा। वस्तुतः यह कार्य हम पर निर्भर नहीं है, बल्कि विपश्यना का समय आ गया है, उसका डंका बज चुका है। हम तो बड़े भाग्यशाली हैं कि इस धर्म-कार्य में माध्यम बन गये हैं। ऐसे धर्मगुरु के प्रत्यक्ष संस्पर्श से हम सचमुच गौरवान्वित हैं। इस गौरव को बनाये रखें, इसी में सब का मंगल है।

धर्म प्रसार की जिम्मेदारी

(यह पत्र पूज्य गुरुदेव ने भारत आकर बसे विपश्यी छोटे भाइयों और उनकी धर्मपत्नियों को लिखा, जिसमें उन्होंने धर्मचर्चा करते हुए शासन-सेवा संबंधी अपने दृढ़ निश्चय और सद्धर्म में अपनी पुष्टता का परिचय दिया है। यद्यपि उस समय तक वे विपश्यनाचार्य नियुक्त नहीं हुए थे परंतु धर्म-प्रसारण हेतु उनका मन निश्चित ही बहुत दृढ़ हो चुका था। यथा--)

दि. २९-१२-६८

प्रिय शंकर, (राधे, सीता, विमला!)

सप्रेम आशीः।

पिछले दो सप्ताह से बहुत अधिक व्यस्त रहने के बाद आज जरा अवकाश मिला है। मैं समझता हूं कि आगे एक सप्ताह तक और व्यस्त रहेंगे और उसके बाद भार-मुक्त हो जायेंगे। सचमुच तीनों उद्योगों का राष्ट्रीयकरण करके सरकार ने हम पर कृपा ही की है। जो कुछ हुआ वह निश्चय ही हमारे भले के लिए हुआ है। अब मैं अपने भविष्य की बात सोचता हूं तो मन पुलक-रोमांच से भर उठता है।

ब्रह्मदेश में रहते हुए मुझे बहुत-सी जिम्मेदारियां पूरी करनी हैं। अब उन सब के लिए पर्याप्त समय मिल गया है। उद्योग-घंधों का भार सिर पर रखते हुए मैं इस ओर कदापि ध्यान नहीं दे सकता था। इस पुण्य-धरती पर रहते हुए हमने सद्धर्म के अमृत का जो रस चखा है और सद्धर्म की गहराइयों का जो थोड़ा-बहुत परिचय प्राप्त किया है, उससे मन में एक ऐसी भूख जाग उठी है जो कुछ वर्ष इसी देश में रह कर पूरी की जा सकती है।

जहां तक प्रतिपत्ति धर्म, यानी, सक्रिय साधना का सवाल है, हमें इस दिशा में अधिक गहराई से डुबकी लगाने का अवकाश मिला है। हम इसका पूरा-पूरा लाभ उठायेंगे। इसी प्रकार परियत्ति, यानी, धर्म-शास्त्रों के क्षेत्र में भी धर्म-साहित्य का कितना बड़ा विशाल संग्रह हमारे सामने पड़ा है। बर्मा से बाहर, विशेषकर भारत में तो मुश्किल से केवल त्रिपिटक भर प्रकाशित हो पाया है; वह भी केवल मूल पालि में, किसी भाषांतर में नहीं। जबकि यहां उस त्रिपिटक से कई गुना बड़ा साहित्य-- त्रिपिटक की अर्थ कथाओं, टीकाओं और अनुटीकाओं के रूप में सँजोया पड़ा है और आद्यभूमि भारत पहुँचने की बाट जोह रहा है। इस विशाल साहित्य का कौन उद्धार करेगा भला? कौन इसे भारत पहुँचायेगा? मैं समझता हूं कि इस क्षेत्र में हमारे सिर पर धर्म-शासन की जो बहुत बड़ी जिम्मेदारी पड़ने वाली थी इसीलिए इन औद्योगिक जिम्मेदारियों से हमें छुट्टी मिली।

बुद्ध की शिक्षा के नाम पर भारत में जो साहित्य लिखा गया वह कहीं-कहीं भ्रामक भी है। इन सबका मुख्य कारण यही है कि अर्थ कथाओं, टीकाओं और अनुटीकाओं के साथ संपूर्ण त्रिपिटक का अभी तक भारत के विद्वानों ने दर्शन ही नहीं किया है, अध्ययन करना तो बहुत दूर की बात है। इसके अतिरिक्त धर्म के व्यावहारिक अभ्यास के बिना भगवान की वाणी को समझे बिना तरह-तरह से तोड़ने-मरोड़ने का प्रयत्न किया जाता है। सारा धर्म-साहित्य प्रकाश में आ जायगा तो यह तोड़ने-मरोड़ने की वृत्ति अपने आप बंद हो जायगी।

भगवान के धर्म-सिद्धांत को कोई मानें या न मानें - यह अलग बात है, परंतु उनके निर्देशों पर, विचारधाराओं पर, उनके धर्म-दर्शन पर अपनी बातों का आरोपण करना बहुत बड़ा अन्याय है और यह अन्याय तब तक होता रहेगा जब तक कि धर्मवाणी संपूर्ण रूप से लोगों के सामने नहीं आयगी। इसी प्रकार जिन्होंने पालि त्रिपिटक पढ़े हैं, वे भी बहुत-सी भ्रामक बातें इसलिए करते हैं क्योंकि वे सद्धर्म के साधना-पक्ष में बिल्कुल कोरे हैं। इस क्षेत्र का सक्रिय अनुभव न होने के कारण त्रिपिटक में लिखी बहुत-सी बातें समझ में नहीं आतीं और परिणामतः उन बातों का सही-सही अभिव्यक्तिकरण नहीं हो पाता। इन दोनों बातों को देखते हुए मैं समझता हूं कि हमारे सिर पर शासन की एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी आ पड़ी है और इसे हमें हिम्मत और लगन के साथ निभाना है। यह काम इसी देश में पूरा हो सकेगा। क्योंकि इस कार्य के लिए जो साधन यहां उपलब्ध हैं वे अन्यत्र नहीं हैं। विशेषकर अभिधम्म की जानकारी तो दुनिया के किसी भी हिस्से में ऐसी नहीं है, जैसी कि यहां है।

उद्योगों का दायित्व शासन के अधिकारियों को पूरी तरह सौंप कर हम कुछ दिनों ध्यान साधना में बैठेंगे और उसके बाद धर्म-शासन के काम में लग जायँगे- यही कामना है।

५-७ दिन पूर्व तुम्हारा एक पत्र आया था, उसे पढ़ कर इस बात की बेहद खुशी हुई कि तुम्हारी धर्म-बुद्धि परिपक्व है और इन उद्योगों के राष्ट्रीयकरण किये जाने से तुम्हारे मन पर कोई क्षोभ नहीं है। यहां भी हमारा मन किंचित भी क्षुब्ध नहीं हुआ, बल्कि पिछले १५ दिनों में जो चमत्कारपूर्ण अनुभूतियां हुईं, उनसे मन सद्धर्म के प्रति और भी अधिक आस्थावान ही हुआ। व्यावसायिक राष्ट्रीयकरण और अर्थ अवमूल्यन के समय धर्म ने किस प्रकार छतरी की तरह तन कर हम सब की रक्षा की थी, लगभग उन्हीं बातों की पुनरावृति हुई और मन बड़ा दृढ़ हुआ कि - ठठधम्मो हवे रक्खति धम्मचारिंठठ यानी - धर्मविहारी का सदा, धर्म रहे रखवाल।

तुमने अपने पत्र में लिखा था कि हम शासन की सेवा के लिए भारत आयें जहां सद्धर्म की बहुत बड़ी भूख है और बहुत बड़ी आवश्यकता भी। हम भी इसे अपने जीवन का एक महत्त्वपूर्ण दायित्व मानते हैं परंतु लगता है कि अभी इसके लिए समय नहीं पका है। अभी इन बादलों को और पानी भर लेने दो। इस धर्म सागर की जलराशि से ये बादल पूरी तरह तृप्त हो जायँगे तो निश्चय ही भारत भूमि पर सद्धर्म की धारा-प्रवाह वर्षा करने आयेंगे और इतनी वर्षा होगी कि वहां का सारा दुःख-दैन्य दूर हो जायगा। इसके लिए समय की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी और उस समय तक हमें इन बादलों को धर्म की जलराशि से भरते रहना होगा।

बाबू भैया को भी यह योजना बहुत पसंद है और हम दोनों इस काम में शीघ्र ही लग जायँगे। हां, बनवारी को उद्योग की जिम्मेदारियों से अलग हो जाने पर किसी न किसी काम में लगाना होगा। इस समय जो काम हमें उसके लिए नजर आता है वह यही है कि वह हमारी देख-रेख में कृषि और गो-पालन के धंधे में लग जाय। यदि कोई समझदारी से काम करे और मेहनत से मुँह न मोड़े तो अपने पास जो गोधन और उपजाऊ धरती है, उसके सहारे सारे परिवार का भली-भांति पालन-पोषण किया जा सकता है। वह इस कार्य में लग जायगा तो उसकी ओर से हमारी चिंता दूर होगी।

आज से लगभग बीस वर्ष पूर्व जबकि तुम्हारा विवाह हुआ था, उस अवसर पर मैंने एक आशीर्वादात्मक कविता लिखी थी जिसका कि एक पद था :--

'जिस धरती पर जन्मे हो, जिस मिट्टी में हो खेले।
वह स्वर्णधरा चाहे तो, सर्वस्व तुम्हारा ले ले।।
इस जन्म-धरा के प्रति तुम, अपना कर्त्तव्य निभाना।
यह सुरपुर से भी सुखमय, मत इसकी गोद लजाना।।'

तुम्हारा पत्र आते ही यकायक ये बोल याद आ गये और इस बात के लिए मन प्रसन्न हुआ कि अपनी जन्म-धरा को सर्वस्व समर्पण करने में तुम्हारा मन पुलकित ही हुआ, क्लांत नहीं। यहां भी बाबू भैया ने जिस अनासक्तभाव से जीवन की इस महत्त्वपूर्ण घटना को सहा है और जिंदगी के नए मोड़ के लिए अपने आप को तैयार किया है वह अत्यंत प्रशंसा के योग्य है। वहां भी परिवार के सभी सदस्यों को चाहिए कि इस तरह की उथल-पुथल को धर्मबुद्धि से ही देखें। छूटी हुई संपदा के प्रति मन में आसक्ति रख कर अपने लिए व्यथा का कारण न बनें। सभी लोग निम्न तीन बातों से बचें :--

१- मन में किसी प्रकार का विषाद न आये-- यह समझते हुए कि जो चीज नष्ट होने के लिए ही बनी थी, उसके नष्ट होने में दुःख क्या? जो चीज हाथ से छूटने के लिए आयी थी, उसके छूटने पर मानसिक वेदना क्यों?

२- मन में किसी के प्रति किंचित भी रोष का भाव न आने दें। जिनके कारण हमारी धन-संपदा गयी, वे बेचारे रोष के नहीं बल्कि दया के पात्र हैं। वे तो केवल निमित्त मात्र बने हैं। यदि वे निमित्त न बनते तो निश्चय ही कोई और निमित्त बनता, जिसकी वजह से यह धन-संपदा अपने हाथों से निकलती। व्यापार में भी हानि हो सकती थी। आग से, जल से, भूकंप से अथवा अन्य प्राकृतिक कारणों से भी हानि हो सकती थी। तब उस अवस्था में हम किसे दोष देते? किस पर रोष प्रकट करते? अतः जो कुछ हुआ है उसे अपने ही कर्मों का फल समझते हुए शांतिपूर्वक और धैर्यपूर्वक सहन कर लेने में ही धर्म की विजय है। किसी पर रोष प्रकट करके हम अपने चित्त द्वारा अकुशल वृत्तियों का प्रजनन कर, अपनी ही हानि करेंगे, किसी अन्य की नहीं।

३- मन में किंचित भी भय का भाव न आने दें। अब क्या होगा? कल कैसे बीतेगा? इस आशंका से चित्त को विचलित कर लेना धर्म से विचलित हो जाना है। हमें अपने कुशल कर्मों पर दृढ़ विश्वास होना चाहिये। समझना चाहिये कि जो कुछ हो रहा है वह हमारे भले के लिए ही हो रहा है। यदि किसी प्रकार का आर्थिक कष्ट सहना ही है तो वह भी भले के लिए ही है। क्योंकि अनंत जन्मों में अनेक ऐसे अकुशल कर्म किए हैं जो कि अभी तक विपश्यना की आग में पूरी तरह जल नहीं पाये। उन कर्मों का विपाक होगा तो कष्टों को सहन कर ऋण-मुक्त हो लेने में ही भलाई है। आगे के लिए मार्ग निष्कंटक हो रहा है। चित्त पर इस बात का संतोष होना चाहिये, प्रसन्नता होनी चाहिये कि ये संकट ऐसे समय आ रहे हैं जबकि हमारी धर्मबुद्धि परिपक्व है और हम इन्हें धर्म प्रज्ञा से सहन कर सकने में समर्थ हैं। जरा सोचो, ये ही कष्ट यदि किसी ऐसे जीवन में आये होते जबकि हममें धर्मबुद्धि का लेश-मात्र भी न होता तब क्या होता? हम इन कष्टों को सहन न कर सकने के कारण मन को दूषित ही करते और इस प्रकार असंख्य नये दुष्कर्मों का सृजन कर अपना भवसंसार लंबा बना लेते। लेकिन अब ऐसी बात नहीं है। हमें न दुःख है, न किसी के प्रति रोष है और न ही भविष्य के प्रति कोई चिंता, भय या आशंका। भविष्य के प्रति क्या भय हो भला?

अपने पूर्वकृत दुष्कर्मों को जला सकने की यह जो सर्वोत्तम विधि हमारे हाथ में है। अपने पूर्व जन्मों में निश्चित ही हमने अनेक कुशल कर्म किये हैं और पुण्य पारमी संचित की है इसीलिए तो इस द्वितीय बुद्ध शासन में सद्धर्म के संपर्क में आये हैं। इस बात का मन में पूरा विश्वास है। अतः उन अनंत पुण्य पारमिताओं के बल पर हमें अपने सुखद भविष्य की ओर से किंचित भी चिंता नहीं है। दुष्कर्मों का फल-विपाक हो रहा है और उसे हम धर्मबुद्धि से सहन कर रहे हैं। बहुत शीघ्र ही शुभ कर्मों के फल-विपाक का समय भी आने ही वाला है। इसलिए हमें भविष्य के प्रति आशा और विश्वासभरा चित्त रखना है। किसी दशा में भी हमारा चित्त भयसंकुल अथवा चिंतायुक्त न हो जाय। इस अवसर पर बार-बार मेरे मन में भगवान की यह मंगलवाणी गूंजती है :--

फुट्ठस्स लोकधम्मेहि, चित्तं यस्स न कम्पति।
असोकं विरजं खेमं, एतं मङ्गलमुत्तमं।।

-- यानी जीवन में ये आठ लोक-धर्म तो सबको ही स्पर्श करते हैं। कौन से आठ लोक-धर्म? दुःख और सुख, हानि और लाभ, जय और पराजय, निंदा और प्रशंसा। परंतु भगवान के मार्ग पर चलने वाले पर इन लोक-धर्मों के स्पर्श का कोई असर नहीं होता। इन लोक-धर्मों के स्पर्श से उसका चित्त प्रकंपित नहीं होता। वह अनासक्तभाव से अपने चित्त को निःशोक रखता है, यानी, उस पर दुःख की वृत्तियां नहीं उत्पन्न होने देता। उस पर राग, द्वेष और वैमनस्य के मैल नहीं लगने देता और इस प्रकार उसे विरज, विमल रखता है। उस पर किसी प्रकार के भय या आशंका की दुष्चिंताएं नहीं आने देता। इस प्रकार उसे क्षेमपूर्वक और विमल रखता है। यों असोकं, विरजं और खेमं बन जाने में ही उत्तम मंगल है।

यह सद्धर्म का प्रभाव है, विपश्यना प्रज्ञा का प्रभाव है जो हमें इस उत्तम मंगल-मार्ग पर दृढ़तापूर्वक चलते रहने के लिए संबल प्रदान करता है। धर्म का यह सहारा निश्चित ही वहां के परिवार के सभी सदस्यों को भी इसी प्रकार संबल प्रदान करता रहेगा। धर्म में विहार करो तो धर्म की ज्योति प्रज्ज्वलित ही रहेगी। धर्म की रक्षा करोगे तो धर्म स्वयं तुम्हारी रक्षा करता रहेगा -- यही सर्वोत्तम मंगल है।

मंगलाकांक्षी,
सत्य नारायण गोयन्का

बुद्ध स्मृति पार्क, पटना में आनापान एवं साधना

बुद्ध स्मृति पार्क, (पटना रे. जंक्शन के सामने) पटना में प्रतिदिन गुरुदेव द्वारा बताई गयी ३० मिनट की आनापान की शिक्षा दी जा रही है। कार्यक्रम-- प्रातः आनापान ९-१५ से ९-४५ बजे, पूर्वाह्न १०-३० से ११-०० बजे विपश्यना-परिचय, आनापान ११-०० से ११-३० बजे, पुनः विपश्यना-परिचय, आनापान १२ से १२-३०, आनापान १२-३० से १-०० बजे तक। सायं ४-३० से ५-३० विपश्यना पर प्रवचन, ५-३० से ६-३० बजे तक सामूहिक साधना होती है। अधिक जानकारी के लिए संपर्क- (१) श्री ओमप्रकाश मनरो, ०९४३११४२४०२, (२) श्री रामप्रताप यादव, पटना - ०७७३९१३५७३५.

नये उत्तरदायित्व

वरिष्ठ सहायक आचार्य

१. श्रीमती शांति माथेर, केंद्र आचार्य की सेवा, धम्म पताका, अफ्रीका
२. श्री राजेंद्र प्रसाद, केंद्र आचार्य की सेवा, धम्म सलिल.
३. श्री अशोक खोब्रागड़े, केंद्र आचार्य की सेवा, धम्मगोंद, गोंदिया

नव नियुक्तियां

वरिष्ठ सहायक आचार्य

1. Mr. Yuth Itchayapruek, Thailand
2. Ms. Sa-nguanwong Khaowisoot, Thailand
3. U Than Htay, Myanmar
4-5. Dr. Tin Maung Yin & Daw Swe Swe Win, Myanmar
6. Dr. (Mrs) Nyunt Nyunt Sein, Myanmar

सहायक आचार्य

१. श्रीमती सुनीता चर्बे, नागपुर
२. श्री नोर्बू भूटिया, सिक्किम
३. डॉ. रनबीर खासा, रोहतक
4. 4. Mr. Kaj Lindauer, Germany
5-6. Mr. John & Mrs. Bianca Angel, New Zealand
7. Mr. Maheu Christophe, France
8. Mr. Simone Greco, Italy
9. Mr. G.K. Siriwardena, Sri Lanka
10. Ms. Kanchana Sudkornrayuth, Thailand
11. Ms. Kamolrat Kitmanee, Thailand
12. Ms. Kasira Billamas , Thailand
13. Ms. Piyawan Ukamthorn, Thailand
14. U Tun Tun Oo, Myanmar
15. U Soe Minn Aye, Myanmar
16. Daw Tin Tin Oo, Myanmar
17. Daw Khin Khin Win, Myanmar

बाल शिविर शिक्षक

१-२. श्री परेशभाई एवं श्रीमती रेखाबेन कलसरिया, सूरत
३. श्री रमेशभाई वाघानी, सूरत
४. श्रीमती जयाबेन पटेल, सूरत
५. डॉ. इला ठक्कर, सूरत
६. श्री राजूभाई राठोड, सूरत
७. डॉ. नीना वैद, नवसारी
८-९. श्री सौरभ एवं श्रीमती स्टैफी पटेल, बिलीमोरा
१०. श्रीमती लक्ष्मीबेन पटेल, बिलीमोरा
११. श्रीमती केवलबेन भाईदास मोरे, डैंग
१२. सुश्री अश्विनी सुधाकर शिरसाठ, थाने
१३. डॉ. संध्या के. शेट्टी, नई मुंबई
14. Ms. Beata Harendra, Poland
15. Mr. Wiktor Morgulec, Poland
16. Mrs. Vimi Mahesh Jesrani, Oman
17. Mr. Ming Chen, China
18. Miss Yanxi Yang, China

कुछ पुरानी यादें - सचित्र

किसी धर्मसभा में जाने के पूर्व बरमी वेशभूषा में

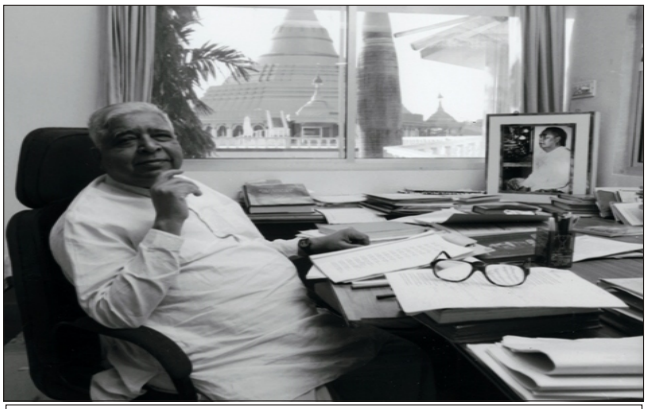

धम्मगिरि के अपने कार्यालय में कार्यरत श्री गोयन्काजी

अंतर्राष्ट्रीय विपश्यना केंद्र में सयाजी ऊ बा खिन एवं साथियों के साथ

ठंढे मौसम में किसी अकेंद्रीय शिविर के दौरान

बरमा की किसी संगोष्ठी में विचार-विमर्श करते हुए

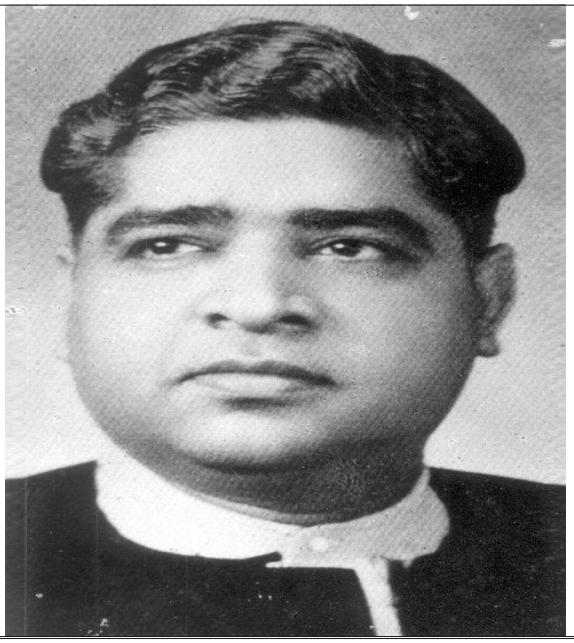

बरमी पासपोर्ट पर लगी श्री गोयन्काजी की युवा फोटो

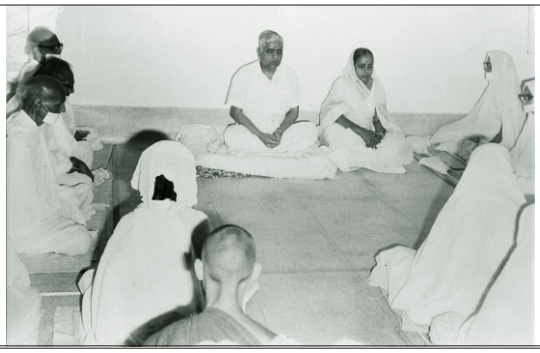

कच्छ में जैन मुनियों एवं साध्वियों के साथ फर्श पर ध्यान-मग्न

Registered No. NSK/235/2012-2014

WPP Postal License No. AR/Techno/WPP-05/2012-2014

१९८१ में काठमांडू का पहला शिविर--
कही जाने के पूर्व श्री यदुकुमार सिद्धि के साथ

पूज्य गुरुदेव की प्रथम पुण्य-तिथि के उपलक्ष्य में एक-दिवसीय महाशिविर एवं संघदान

शरद पूर्णिमा एवं **पूज्य गुरुदेव की पुण्य-तिथि** के उपलक्ष्य में **रविवार, 28 सितंबर २०१४ को पूज्य माताजी की उपस्थिति में 'ग्लोबल विपश्यना पगोडा' में एक दिवसीय महाशिविर होगा। इसके अंत में (३ बजे से) पूज्य गुरुदेव के म्यंमा में अस्थि-विसर्जन समारोह की झांकी (विडियो) दिखायी जायगी। इस उपलक्ष्य में प्रातः १० से ११ बजे के बीच संघदान का आयोजन किया गया है। इस संघदान में भाग लेकर दान-पारमी बढ़ाने के इच्छुक कृपया 'ग्लोबल विपश्यना फाउंडेशन' के निम्न लोगों से संपर्क करें-- (१) श्री विपिन मेहता, Tel.022-33747510; (2) श्री डेरिक पेगाडो, Tel.022-33747512. Email: audits@globalpagoda.org; Tel.: 022-33747501. शिविर-समयः** प्रातः **11** बजे से अपराह्न **4** बजे तक. यहां 3 बजे के अस्थि-विसर्जन विडियो कार्यक्रम में बिना साधना किये लोग भी बैठ सकते हैं। बुकिंग के लिए कृपया निम्न फोन नंबरों या ईमेल से शीघ्र संपर्क करें। कृपया बिना बुकिंग कराये न आयें और **समग्गानं तपोसुखो**- सामूहिक तप-सुख का लाभ उठाएं। **संपर्कः** 022-28451170 022-337475-01/43/44- Extn. 9, **(फोन बुकिंगः** प्रातः **11** से सायं **5** तक, प्रतिदिन) **Online Registration: www.oneday.globalpagoda.org**

धम्मपुष्कर, अजमेर की निर्माण-प्रगति

धम्मपुष्कर विपश्यना केंद्र पर २९ शून्यागारों का पगोडा और कुछ एक धम्मसेवक-निवास बन कर तैयार हो गये हैं। परिसर में लगभग ८०० वृक्ष लगाये गये हैं। अब पुरुषों के कुछ निवास तथा लघु धम्महॉल का निर्माण, सोलार वाटर हीटिंग सिस्टम, कुछ लक़ड़ी के पलंग, महिला-पुरुष के बीच की स्थायी फेंसिंग, पौधों की आधुनिक सिंचाई-पद्धति तथा सौंदर्यीकरण आदि अनेक उपयोगी काम हाथ में लिये गये हैं। इस पुण्यवर्धक कार्य के विषय में अधिक जानकारी और सहयोग के लिए कृपया संपर्क करें-- श्री रवि तोषणीवाल- ९८२९०७१७७८ या श्री अनिल धारीवाल- ९८२९०२८२७५.

दोहे धर्म के

गहन निशा वन भटकते, हुआ विकल गुमराह।
सहज दिखाया धर्मपथ, गुरु ने पकड़ी बांह॥

धन्य भाग! गुरुवर मिले, करुणा के भंडार।
अंधे को आंखें मिलीं, सत्य धरम का सार॥

काम-क्रोध की बाढ़ में, डूब रहा मँझधार।
दिया सहारा धरम का, गुरुवर लिया उबार॥

अंतर्मन की गहनता, सहज न देखी जाय।
गुरुवर की होवे कृपा, मुक्ति-युक्ति मिल जाय॥

धन्य! धन्य! गुरुदेव जी, धन्य! बुद्ध भगवान।
शुद्ध धर्म ऐसा दिया, होय जगत कल्याण॥

केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा०) लिमिटेड
८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई- 400 018
फोनः 2493 8893, फैक्सः 2493 6166
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

धरम दियो गुरुदेवजू, किसो'क अमित अमोल।
दुख स्यूं ब्याकुल जीव नै, दीन्यो इमरत घोळ॥

अहोभाग! गुरुदेवजू, प्रग्या दयी जगाय।
थोथै बाद-बिवाद रा, बंधन दिया छुड़ाय॥

गुरुवर दीनी साधना, चख्यो धरम रो स्वाद।
संगत सुखदा संत री, मन रो मिट्यो विसाद॥

पथ भूल्यो दिग्भ्रम हुयो, रह्यो हियो अकुळाय।
धन धन धन गुरुदेवजू! सतपथ दियो दिखाय॥

रोम रोम किरतग हुयो, रिण न चुकायो जाय।
जीऊं जीवन धरम रो, यो ही एक उपाय॥

मोरया ट्रेडिंग कंपनी
सर्वो स्टॉकिस्ट - इंडियन ऑईल, ७४, सुरेशदादा जैन शॉपिंग कॉम्प्लेक्स, एन.एच.६, अजिंठा चौक, जलगांव - ४२५ ००३, फोन. नं. ०२५७-२२१०३७२, २२१२८७७
मोबा.०९४२३१८७३०१, Email: morolium_jal@yahoo.co.in
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादकः राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-422 403, दूरभाष : (02553) 244086, 244076.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, 69- बी रोड, सातपुर, नाशिक-422 007. **बुद्धवर्ष 2558, भाद्रपद पूर्णिमा, 9 सितंबर, 2014**

वार्षिक शुल्क रु. **30/-,** US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. **500/-,** US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. 19156/71. Registered No. NSK/235/2012-2014**

WPP Postal Licence No. AR/Techno/WPP-05/2012-2014
Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422 403,** Dist. Nashik (M.S.)

If not delivered please return to:-

विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - 422 403
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
फोन : (02553) 244076, 244086, 243712,
243238. **फैक्स :** (02553) 244176
Email: info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org